कृपणपाल करुणा समुद्र रामानुज सम नहीं बियो

शास्त्री कोसलेन्द्रदास

रामानुजाचार्य वैष्णवों की प्राचीनतम परम्परा में अन्यतम श्रीसंप्रदाय की सुदृढ शास्त्रीय भित्ति के निर्माता हैं। वैष्णव संप्रदायों को शास्त्रीय रूप में स्थापित करने का श्रेय आचार्य रामानुज को है। अभी रामानुज का जन्म सहस्राब्दी वर्ष चल रहा है। इनका जन्म सहस्राब्दी वर्ष कब शुरू हुआ, इसकी खास चर्चा नहीं हुई। यह दुःखद आश्चर्य है कि हमारी राजनीति के महासागर में चंद हंस ही ऐसे हैं, जो रामानुजाचार्य के महत्त्व को समझते हैं। जो भारत को जानना-पहचानना चाहते हैं, उन्हें मालूम है कि आचार्य रामानुज भारतीय परंपरा के मेरुदंड हैं। उनके बिना भारत के अमर इतिहास की चर्चा पूरी नहीं की जा सकती। उनका दार्शनिक चिंतन अपने-आप में एक संसार है, जिसमें भक्ति की सर्वश्रेष्ठता है।

भारत के अमर भक्ति इतिहास में अप्रतिम साधक रामानुजाचार्य का जन्म 1016 ईस्वी में तमिलनाडु के श्रीपेरुंबुदूर में हुआ। वे संस्कृत और तमिल परंपरा के मिलन बिंदु हैं। उन्होंने समाज में जातिगत ऊंच-नीच और झोपड़ी-महल के बीच समानता के संवाद सेतु बनाए। कठोर धार्मिक क्रियाओं को लोगों के लिए सरल और सहज बनाया। ऐसा करते हुए वे अपने पूरे जीवन काल में तीन मोर्चों पर युद्धरत रहे। अपनी परंपरा और समसामयिक समस्याओं में सेतु बनाना पहला मोर्चा है। ब्रह्मसूत्रों पर भाष्य लिखते वक्त वेदांत को जीवन की जटिलताओं से जोडऩा दूसरा और भक्ति को आम लोगों के लिए ईश्वर प्राप्ति का आसान तरीका बनाना तीसरा मोर्चा है। इस तरह उनका पूरा जीवन युद्धरत दिखाई देता है, जिसका संकेत रामधारी सिंह दिनकर ने अपनी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में किया है। वे लिखते हैं कि 'सामाजिक समता की दिशा में तत्कालीन ब्राह्मण जहां तक जा सकता था, आचार्य रामानुज वहां तक जाकर रुके। उनके संप्रदाय ने लाखों शूद्रों और अंत्यजों को अपने मार्ग में लिया, उन्हें वैष्णव-विश्वास से युक्त किया और उनके आचरण धर्मानुकूल बनाए और साथ ही ब्राह्मणत्व के नियंत्रणों की अवहेलना भी नहीं की।'

भक्ति सिद्धांत को मजबूत शास्त्रीय आधार प्रदान कर उसके वेद प्रतिपादित होने की पहले-पहल स्थापना रामानुजाचार्य ने की। 'पद्मपुराण' की एक मान्यता उन्हें भगवान विष्णु की शय्या शेष का अवतार कहता है। इसका संकेत चार शताब्दी पहले भक्त चरित्र के सर्वश्रेष्ठ द्रष्टा और गायक नाभादास ने 'भक्तमाल' में किया है। संत साहित्य के प्रामाणिक विद्वान 'भक्तमाल' की रचना 1600 ईस्वी के आसपास तथा रचना स्थल रैवासा (सीकर) तथा वृंदावन मानते हैं। यह भक्ति परंपरा, उसके विकास तथा भक्तों के

जीवन को जानने के लिए सबसे काम का दस्तावेज है। नाभादास ने रामानुजाचार्य के लोकोत्तर व्यक्तित्व और अदम्य कृतित्व को सूत्रात्मक रूप से प्रकट करते हुए लिखा है-

सहस्र आस्य उपदेस करि जगत उद्धरण जतन कियो
गोपुर ह्वै आरूढ उच्च स्वर मन्त्र उचार्यो।
सूते नर परे जागि बहत्तरि श्रवणनि धार्यो।।
तितनेई गुरुदेव पधति भई न्यारी न्यारी।
कुरुतारक शिष्य प्रथम भक्ति वपु मंगलकारी।।
कृपणपाल करुणा समुद्र रामानुज सम नहीं बियो।
सहस्र आस्य उपदेस करि जगत उद्धरण जतन कियो।।

यह अल्पज्ञात तथ्य है कि 'भक्तमाल' पर कालांतर में जितनी टीकाएं हुईं, उनमें माध्वगौडेश्वर वैष्णव संप्रदाय के सुख्यात संत-कवि श्रीप्रियादास की 1769 ईस्वी में लिखी 'भक्तिरसबोधिनी' टीका सर्वाधिक प्रसिद्ध तथा प्रामाणिक है। वे आचार्य रामानुज के बारे में लिखते हैं-

आस्य सो बदन नाम, सहस हजार मुख, शेष अवतार जानो वही, सुधि आई है
गुरु उपदेशि मन्त्र, कह्यो 'नीकै राख्यौ' अन्त्र, जपतहि श्यामजू ने मूरति दिखाई है।
करुणानिधान कही 'सब भागवत पावैं' चढ़ि दरवाजे सो पुकार्यो धुनि छाई है
सुनि शिष्य लियो यों बहत्तर हि सिद्ध भए नए भक्ति चोज, यह रीति लैकै गाई है।।

यह सांप्रदायिक इतिहास है कि रामानुज के प्राचार्य (गुरु के गुरु) उस समय भक्ति के सबसे बड़े आचार्य थे। उनका नाम यामुन मुनि है, जिनके पांच प्रमुख शिष्य थे। यामुनाचार्य आलवंदारस्तोत्र तथा सिद्धित्रय ग्रंथों के लेखक हैं। रामानुजाचार्य को उनके पांच शिष्यों से भिन्न-भिन्न तत्त्वों का ज्ञान मिला-

महापूर्णाचार्य - पञ्चसंस्कारयुता श्रीनारायण-अष्टाक्षरमन्त्र (ॐ नमो नारायणाय) की दीक्षा।
काञ्चीपूर्णाचार्य - परतत्त्व का निर्णय।
गोष्ठीपूर्णाचार्य - श्रीमन्नारायण अष्टाक्षर मंत्र के अर्थ का उपदेश।
शैलपूर्णाचार्य - श्रीमद्वाल्मीकिरामायण के दिव्यार्थ का तत्त्वज्ञान।
मालाधराचार्य - सहस्रगीति (दिव्यप्रबन्ध-तमिळ भाषा में निबद्ध) के गूढार्थ का प्रवचन।

तथ्य है कि आचार्य रामानुज से पहले उनके परमगुरु यामुनाचार्य ने शंकराचार्य के अद्वैत सिद्धांत का खंडन कर जीव की स्वतंत्र सत्ता का प्रतिपादन कर भक्ति मत को शास्त्रीय सिद्धांत के अनुसार स्थापित कर दिया था। परंतु वेद और उपनिषदों पर आधारित 'श्रीभाष्य' (ब्रह्मसूत्र भाष्य) लिखकर रामानुज ने ही भक्ति को मोक्ष के साधन के रूप में पहले-पहल स्थापित किया। भक्ति की वेदप्रतिपादकता और उसकी मोक्षकारणता को मजबूत शास्त्रीय तर्कों के साथ सिद्ध कर दिया। उनके भक्ति सिद्धांत ने मानव मात्र के लिए ईश्वर प्राप्ति के दरवाजे खोल दिए। उन्होंने भक्ति और शरणागति में जाति भेद, लिंग भेद और वर्ण भेद के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ा। यह सब भी मात्र बौद्धिक तर्कों से नहीं, बल्कि सुदृढ शास्त्रीय आधार पर। उन्होंने यह घोषणा ही कर दी कि 'कोई व्यक्ति इसलिए नीच या ऊंच नहीं हो सकता कि उसका जन्म किस कुल या जाति में हुआ है! उसकी श्रेष्ठता तो ईश्वर के बताए मार्ग पर चलकर उसे पा लेने से ही सिद्ध होती है। जिसके लिए सदाचरण बेहद जरूरी है।'

आचार्य रामानुज की सबसे महत्वपूर्ण दार्शनिक स्थापना वह है, जिसमें एकमात्र अद्वैत तत्त्व स्वीकारते हुए भी जगत को मिथ्या नहीं कहकर उसकी उपेक्षा नहीं की गई। जगत सत्य है, क्योंकि इसका निर्माण उन पंच महाभूतों से मिलकर हुआ है, जो श्री-भू-नीलानायक श्रीमन्नारायण के शरीर हैं। यह बात 'बृहदारण्यकोपनिषद्' ने कही है-यस्य जलं शरीरम्। यस्य वायु: शरीरम्। यस्याकाश: शरीरम्। वे परमात्मा नारायण इस संसार को सृष्टि अवस्था में स्थूल तथा प्रलयावस्था में सूक्ष्म रूप से सदा धारण करते हैं। वे सगुण ब्रह्म 'शरीरी' हैं। फलत: यही बात सिद्ध होती है कि हमारा और उनका अंश-अंशी, शरीर-शरीरी, आधार-आधेय और जीव-ब्रह्म का संबंध है। यह संबंध सार्वकालिक होने के नाते सनातन है। इतना ही नहीं, हमारी आत्मा भी उन भगवान का शरीर है-यस्यात्मा शरीरम्। अत: वे परमात्मा हमारे धारक हैं। जीव और प्रकृति से सदा 'विशिष्ट' होने के नाते वह 'अद्वैत' तत्त्व 'विशिष्ट+अद्वैत=विशिष्टाद्वैत' तत्त्व कहलाता है। यह सिद्धांत रामानुज परंपरा का प्राण है। रामानुज संप्रदाय के अनुपम आचार्य श्रीवेदांतदेशिक 'न्यायसिद्धाञ्जनम्' के प्रारंभ में कहते हैं-एकमेव तत्त्वं तच्च ब्रह्मेति। अर्थात एक ही तत्त्व है, वह है ब्रह्म। वह ब्रह्म अपने शरीरभूत दो तत्त्वों से सदा विशिष्ट है। अत: वे सर्वेश्वरेश्वर एकमात्र 'विशिष्टाद्वैत' तत्त्व हैं।

आचार्य रामानुज ने वैदिक मान्यताओं के आधार पर जो विशिष्टाद्वैत दर्शन स्थापित किया, उसका सिद्धांत है कि भगवान लक्ष्मीनारायण संसार के माता-पिता हैं। उनका प्रेम और कृपा पाना उनकी हरेक संतान का धर्म है। उन्होंने केवल शास्त्रीय बातें लिखी ही नहीं, बल्कि स्वयं उनका प्रयोग भी किया। दलित भक्त मारीनेरनंबी की उपासना को अनुकरणीय बताकर उन्हें अपने संप्रदाय में आदर्श के रूप में स्थापित किया। मुस्लिम कन्या तुलुक्क नाच्चियार की लोकोत्तर भक्ति के कारण उनके मंदिर का निर्माण

करवाया, जहां आज भी उनकी पूजा होती है। यादवाद्रि के प्रसिद्ध संपत्कुमार मंदिर में दलितों का प्रवेश करवाया।

भक्ति परंपरा में उत्तर और दक्षिण का भेद नासमझी के कारण अभी तक बना हुआ है। इस नासमझी से अनेक झगड़े हुए है। ऐतिहासिक तथ्य यही है कि भक्ति की धारा दक्षिण भारत से शुरू हुई। उसका एक हजार साल का लिखित इतिहास है। तमिलनाडु उसके केंद्र में है। रामानुजाचार्य को उस धारा का संस्थापक आचार्य कहा जाता है। यह निर्विवाद है कि उसी भक्तिधारा को चौदहवीं सदी में स्वामी रामानंद उत्तर भारत में ले आए थे, जिन्होंने अपना केंद्र वाराणसी में पंचगंगा घाट के 'श्रीमठ' को बनाया। उन्होंने भक्ति की सर्वजन सुलभता को अपूर्व रीति से आगे बढ़ाया। कबीर और रैदास जैसे संत स्वामी रामानंद के भक्ति आंदोलन से इसी उदारता के कारण जुड़ सके। इस तरह रामानुजाचार्य का भक्ति सिद्धांत पूरे भारत में फैला। कबीर की प्रसिद्ध उक्ति रामानुजाचार्य के इस अदम्य कृतित्व की ओर ही इशारा करती है, जिसमें वे कहते हैं, 'भक्ति द्राविड़ ऊपजी...।' इस तरह दक्षिण में रामानुज का चलाया भक्ति मार्ग पूरे भारत में फैला। मध्यकाल में इस आंदोलन से ही पीपा, सेन, धन्ना, गोस्वामी तुलसीदास, मीरा और दादू तथा रामचरणदास जैसे अनेक भक्त-संत कवि पैदा हुए।

रामानुजाचार्य ने जहां से अपना भक्ति आंदोलन चलाया, वह तमिलनाडु का श्रीरंगम् है। यह नाम अपने आप में भक्ति उत्पन्न करता है। साफ है रामानुज की 'भक्ति' का तात्पर्य भगवान के गुणगान और नाम स्मरण से है। विद्वानों का मानना है कि रामानुज संप्रदाय के मठ-मंदिरों का फैलाव उत्तर और दक्षिण दोनों में था। आश्चर्य की बात है कि रामानुजाचार्य के उन विशाल मंदिरों में से अनेक लुप्त हो गए हैं। परंपरा दर्शाते इन मंदिरों में अब लोगों के घर हैं, दुकानें हैं। यदि इन्हें पुराने रूप में आबाद करना संभव हो सके तो ये सामाजिक समरसता के नए आंदोलन का रूप ले सकते हैं।

राजनीति के लोग हर व्यक्तित्व और उसके इतिहास का अपने हिसाब से उपयोग करते हैं। कुछ ही दिन हुए हैं जब मठ-मंदिरों के विरोध की राजनीति करने वाले एम. करुणानिधि ने तमिलनाडु विधानसभा चुनाव से ठीक पहले रामानुजाचार्य को महान दलित हितकारी संत बताया था। यह समाचार प्रमुखता से छपा। लेकिन इससे रामानुजाचार्य की स्वीकार्यता या अस्वीकार्यता पर कोई खास असर नहीं पड़ा। उन्हें परंपरागत रूप से मानने वाले उन्हें इस रूप में पहले से ही जानते हैं। यही कारण है कि आज पूरे देश में रामानुजाचार्य लोगों के कंठहार और उनके मठ-मंदिर श्रद्धा-वंदन के केंद्र बने हुए हैं। अच्छा भी रहे कि सरकार रामानुजाचार्य के सहस्राब्दी वर्ष के बहाने उनकी स्मृति को चिरंतन बनाने के लिए मजबूत काम करे, जिससे हमारी आने वाली पीढ़ियां भी उनके अमर कृतित्व की छाया में रह सके।

आचार्य रामानुज आज के साधु-संतों के लिए दर्पण भी हैं कि जो आज के दौर के परिवर्तन की दुहाई देकर संन्यास के बदले स्वरूप की पैरवी कर रहे हैं। यह सही है कि संसार के सभी क्षेत्रों में परिवर्तन हुए हैं। खान-पान बदला है। सामाजिक चिंतन बदला है। किंतु ऐसे परिवेश में भी संतत्व निखरा रह सकता है। संतत्व लाखों भारतीयों को प्रेरित करता है। संतों का काम बहुत व्यापक है। लोगों को संयम के लिए प्रेरित करना, अच्छाई की ओर प्रेरित करना, दुराचार को रोकने का प्रयास करना, समाज को ईश्वर की ओर ले जाना। हमारी परंपरा में संत तत्व का ही विशद वर्णन है। रामायण और योगदर्शन में लिखा है कि व्यक्ति पूर्णत: अहिंसक हो जाए, तो साक्षात विरोधी जीवों में भी अहिंसा की भावना आ जाती है। इसीलिए शाश्वत विरोध वाले बाघ और हिरण एक साथ संतों के आश्रमों में रहते थे, कोई किसी को परेशान नहीं करता था। प्रेम का वातावरण संत बनाते हैं। दुनिया की दूसरी व्यवस्थाओ में उतना दम नहीं है, जितना संतों की व्यवस्था में दम है। इसी व्यवस्था को आचार्य रामानुज ने ईश्वरीय भावना के अनुरूप ढालकर समाज के निर्माण में एक नए युग का सूत्रपात किया था।

भारत के इतिहास में सबसे अधिक प्रभावशाली संत रामानुजाचार्य हैं। इनका प्रभाव केवल बौद्धिक या आध्यात्मिक न होकर सामाजिक किंवा व्यक्तिगत भी है। समाज के हर चेतनावान प्राणी को दृष्टि देने का अभूतपूर्व जो कार्य आचार्य रामानुज ने किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। मानवीय भावना को लेकर आध्यात्मिक एवं सामाजिक समरसता को प्रतिष्ठित करने के लिए रामानुजाचार्य ने ही भक्ति को वैदिक सिद्धांतों के बीच गौरवपूर्ण रूप से स्थापित किया। - डॉ. उमेश नेपाल, जगद्गुरु रामानंदाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर

महाभारत के बाद भारतीय समाज में हुआ बंटवारा बहुविध है। न केवल सामाजिक बल्कि शैक्षणिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक स्तर पर कहीं भी समन्वय नहीं दिखता है। बुद्ध के अवतार के बाद अहिंसा सिद्धांत की प्रतिष्ठा हेतु जीवनोपयोगी हिंसा का भी विरोध होने लगा। मीमांसा व शांकर दर्शन ने मानवीय भावभूमि का तिरस्कार करके केवल कर्म तथा केवल ज्ञान के सिद्धांतों को प्रतिष्ठित किया। इसके बाद एक हजार साल पहले आचार्य रामानुज ने संपूर्ण भारतीय संस्कृतियों को जोडक़र वैदिक अद्वैत सिंद्धांत को यथावत रखते हुए जिस सर्वसमावेशी मार्ग का उपदेश किया है, वह नितांत अद्भुत तथा गंभीर है। - प्रो. वीरनारायण के. पांडुरंगी, दर्शन विभाग, कर्णाटक संस्कृत विश्वविद्यालय, बेंगलूरु

कोई भी मनुष्य प्राणिमात्र को ईश्वर का रूप मानकर उसकी सेवा से साधना के सर्वोच्च स्तर तक जा सकता है। इसी भाववृत्ति के साथ भारत की दार्शनिक परंपरा का नवनवोन्मेष करके आचार्य रामानुज ने मनुष्य सेवा से ईश्वर प्राप्ति का जनसुलभ रास्ता खोला है। इसकी जो शास्त्रानुकूल विधि रामानुजाचार्य ने प्रतिष्ठापित की, वह भारत सहित संपूर्ण विश्व के कल्याण का एकमात्र मार्ग है। जगद्गुरु

रामानुजाचार्य की यह सहस्राब्दी जीव मात्र में अभिव्यक्त होने वाले ईश्वर की सेवा और आराधना से लोगों की सद्गति का मार्ग प्रशस्त करेगी। - प्रो. जयकान्त सिंह शर्मा

श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली

रामानुज संप्रदाय की देश-विदेश में अनेक पीठें हैं। संप्रदाय की प्रमुख पीठें दक्षिण भारत में स्थित हैं। दक्षिण के अलावा अयोध्या, वृंदावन, वाराणसी, हरिद्वार समेत अनेक धार्मिक नगरियों में भी रामानुज संप्रदाय के अनेक मठ-मंदिर हैं। संप्रदाय की प्रमुख पीठें हैं-

1. वानमामलै, तिरुनेल्वेलि
2. श्रीरंगम्, तिरुच्चि
3. अहोबिलम्, तिरुपति
4. श्रीरंग मंदिर, वृंदावन
5. उत्तराहोबिल मठ, डीडवाना-पुष्कर
6. अशर्फी भवन, अयोध्या

सहायक आचार्य - दर्शन विभाग
जगद्गुरु रामानंदाचार्य राजस्थान संस्कृत विवि, जयपुर